शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जनवरी 2013

उत्तर–आधुनिकता का कबीर : मनोहरश्याम जोशी

दिनेश मौर्य
शोधार्थी, नेट, जे.आर.एफ.
दे. अ. वि. वि. इन्दौर

शोध संक्षेप

प्रख्यात लेखक मनोहरश्याम जोशी ने अपने वैचारिक लेखन और तीक्ष्ण व्यंग्य से हिन्दी को समृद्ध किया है। उनके तेवरों को पढ़–सुनकर असहजता का अनुभव भी किया है। एक सुंदर और समर्थ गद्य से ही लेखकों की प्रतिभा और आत्मसंघर्ष का पता चलता है। पुरानी भाषा शैली, सोच विचार से न तो हम वर्तमान को सज़ा संवरा देख सकते हैं, न बदलते हुये जनमानस को अनुरंजित अथवा संस्कारित कर सकते हैं और न ही अपने संकटों से जूझते हुए प्रतिक्रिया कर सकते हैं यानि फार्मूलाबद्ध या परिधि में रहकर अरुणोदित विचार की आशा अनपेक्षित है। श्री मनोहरश्याम जोशी के लेखन की पड़ताल प्रस्तुत शोध पत्र में की गयी है।

"अपने लेखन की और चिंतन में अधुनिकता, उत्तर–आधुनिकता की ओर निरंतर चिंतनशील मनोहर श्याम जोशी उर्फ मश्जो न तो स्त्री–विमर्श की ओर गये, न दलित लेखन की ओर, न किसी विचार धारा के प्रति प्रतिबद्धता की कसमें खाई, न किसी देशी–विदेशी रचनाकार की नकल के चक्कर में पड़े, न तो कोई फार्मूलाबद्ध लेखन। पता नहीं उन्होंने कैसे इस सत्य को पा लिया था कि उत्तर–औपनिवेशिक समय का सबसे बड़ा संकट यह है कि संस्कृति की सीता को वर्जनाओं में नहीं बांधा जा सकता क्योंकि पूरे समाज का अमेरिकीकरण हो रहा था और नव्य सांस्कृतिक साम्राज्यवाद के अनेक–अनेक रूपों में छवियों, प्रतीकों, मिथकों यहाँ तक कि आख्यानों तक पर प्रभावित हो रहा है।''1 मश्जो के साहित्य में सदैव नवोन्मेष का इतना प्रवाह है कि उनकी हर रचना कबीरांदाज में 'लिये लुकाठा हाथ' अपना पथ स्वयं सृजित कर लेती है।

"देख यह दहलीज की कोई नहीं जाने वाली।
ये खतरनाक सचाई नहीं जाने वाली''2

समाज की 'खतरनाक सचाई' को ही मश्जो ने कहानी नाटक, उपन्यास, व्यंग्य, धारावाहिक, फिल्म एवं साप्ताहिक हिंदुस्तान में लेखों के माध्यम से पर्दाफाश करने का साहस किया है। वर्ष 1980 में प्रकाशित अपने प्रथम उपन्यास कुरु–कुरु स्वाहा जिसका "संस्कृ ताधारित अर्थ है–करो, करो स्वाहा"3 में कथानक विहीन, नायक विहीन तथा उपस्थित मात्र नायिका से सभी को चौंका दिया। जो खासी फूहड़ भद्दी अर्धनग्न नायिकाओं की वर्तमान संकृति पर तमाचे की तरह चोट करता है। 'कसप' उपन्यास के अंत में कथानायक देवीदत्त उर्फ डी.डी. उषाकाल में रो रहा है। लेखक ने बड़े सहज ढंग से उसके रोने के सामाजिक, वैज्ञानिक और आध्यात्मिक कारणों की पड़ताल की है। इतना तो डी.डी. अभाव व कष्ट से भरे बचपन में नहीं रोया था। उसके रोने के तर्क वितर्क पर विचार करता पाठक स्वयं अपनी आँखों पर हाथ फेरने लगता है। क्यों वह वह पश्चिम (अमेरिका) से आकर पूर्व (भारत) में रोता है ? क्योंकि पक्षी चाहे जितना ऊँचा उड़े लेकिन उसे सहारा, आसरा धरती ही देती है। "डी.डी. के व्यक्तित्व के अन्तर्विरोध इस परिवेश से संबद्ध है वह असंख्य अभिशप्त लोगों के बीच उड़ रहा था। समाज में पंख व पाँव का

विरोधाभास है। डी.डी. में भारतीय आध्यात्म और अमेरिकी भोगवाद का विरोधाभास है।''4

'हरिया हरक्युलिज की हैरानी' में सामंतवाद के औपनिवेशिक दौर के पटाक्षेप का कथानक है। लेखक ने पिता द्वारा मदुआ कहे जाने वाले हरिया की महानता को चिह्नित किया है। हरिया के 'सोशल विजिट' की बिरादरी वाले भले ही बुराई करते हैं लेकिन सेवा भाव के बदले पुरस्कार की आशा किये बगैर हरिया अपना कर्तव्य निभाये जा रहा है। आज परोपकार के स्थान पर स्वार्थ के लंबे हाथ हो गये हैं अतः आदमीयत घुटती जा रही है। बुजुर्ग माता–पिता की सेवा करने वालों से समाज सूना है। 'बागबान' फिल्म देखकर द्रवित होने की कमी आज नहीं है लेकिन कर्तव्य निभाने के समय सभी बगलें झाँकने लगते हैं। ऐसे समय में लेखक ने 'हरिया' को गढ़ा है। आज यांत्रिक युग में दूरियाँ भले सिमटी हों लेकिन भावात्मक दूरी बढ़ती जा रही है। एक घर में शिक्षित व्यक्तियों में भी संवाद स्वाद नदारद होता जा रहा है–

करवट बदला वक्त ने मूल्य हुए बर्बाद। माता
पिता से बंद है बेटों के संवाद

'हमजाद' उपन्यास पूंजीवाद के उत्तर औद्योगिक दौर की परिणति का कच्चा चिट्ठा है। चरित्र निर्माण की दिशा यदि ठीक नहीं है तो दृढ़ संकल्प विनाशकारी भी हो सकता है। यह शक्ति निष्ठुर व्यक्तियों को शैतान बनाकर अनेक अनैतिक कार्य के लिए उकसाती है। 'हमजाद' वैश्विक स्तर पर बढ़ते बाजारवाद की मनोवृत्ति की उपज है जो देह–सुख, भौतिक सुख के लिए नैतिकता का ह्रास और आदमी कितना गिर सकता है, इसका नमूना पेश किया है। "इस उपन्यास में हैवानियत अपनी चरम सीमा पर है। स्त्री–पुरुष शुद्ध नर–मादा के रूप में हैं।''5

'टा–टा प्रोफेसर' उपन्यास के माध्यम से कूर्मांचल की विधवाओं की सोच, दिनचर्या व विवशता के साथ स्कूल में अध्यापिकाओं के प्रति पुरूष शिक्षकों के नजरिये को मजे लेकर प्रस्तुत किया है। यह उपन्यास इसलिए और महत्वपूर्ण है कि इसमें 'थ्री इडियट' फिल्म की तरह अभिभावक की महात्वाकांक्षा के विशाल वट तले बालक यतीश का बचपन घुटता है और सारी उम्र यातना में। बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए उसका स्वतन्त्र होना अनिवार्य है इसकी चर्चा 2001 में प्रकाशित इस उपन्यास में की गई है।

सूचना प्रौद्योगिकी के विस्फोट और भूमण्डलीकरण का प्रभाव मश्जो के साहित्य का केन्द्र है। शायद आज प्रेमचन्द 'गोदान' के बाद यथार्थवादी साहित्य लिखते तो आश्चर्य नहीं कि यही रूप होता।

"प्रेमचंद संघर्षशील समाज पर लिख रहे थे। उनके साहित्य में आशावाद और यथार्थवाद के दर्शन होते हैं। मश्जो पतनशील समाज में लिख रहे थे उनके साहित्य में विद्रूप विडम्बना का स्वर मुखर है। उनकी समस्त रचनाओं में प्रचलित व्यवस्था के टूटने और उसके भीतर से नयी व्यवस्था के उभरने की गाथा है।"6 'उत्तर आधुनिकता की इस चकाचौंध में मूल्य परिधि पर आ गये हैं। गाँव, शहर हर जगह यह बीमारी और बुराई फैल गई है। ऐसे में लेखक यदि यथार्थ की उपेक्षा करेंगे तो वह क्या लिखेगा ? समय के रस, रूप, गंध और स्पर्श सभी की भावानुभूति को व्यंग्य और बेलागपरक कथन शैली में लिखकर आस्वादपरकता को व्यापक फलक प्रदान किया है। देश, समाज, काल की बदलती आकांक्षा, नई चुनौतियों एवं समस्याओं से टकराने की कूबत इनके निबंधों की ताकत है। वास्तव में किसी भी विधा की प्रासंगिकता देशकाल के

साथ–साथ जनमानस के परिवर्तनशील संवेदनात्मक ज्ञान एवं ज्ञानात्मक संवेदन से निर्धारित होता है। 'नेताजी कहिन','कक्का जी कहिन', 'भीड़ में खोया समाज', नमस्कार, मेरा भारत महान, 'उस देश का यारों क्या कहना' जैसी अनेक गद्य रचनाएं आजादी के बाद के स्वप्न ध्वंस एवं व्यवस्था से मोहभंग के कारणों को खिलंदड़ अन्दाज में अनावृत किया है। साथ ही जज्बा, जोश व जिद के साथ लड़ने व विरोध करने का नैतिक साहस भी प्रदान किया है। 'नेताजी कहिन' व्यंग्य में नेता जी कहते हैं– "मंहगाई का खेल इण्टरनेशनल हय। तेल का दाम बढ़ने से सुरू हुआ हय। दूसरी बात देश का किसान भाई पइदावार का ज्यादा पइसा माँग रहा है। तीसरी बात सरकारी खर्च बढ़ रहा है। इन तीनों पर किसी का बस नहीं।''7

आज की बढ़ती मँहगाई, तेल के दामों में वृद्वि, किसानों की आत्महत्याएं, आम आदमी का खाली पेट जैसी समस्याओं से देश जर्जर मालूम पड़ता है परन्तु नेताओं का विलासी जीवन और आम आदमी की पहुँच से दूरी देखकर निःसन्देह लेखक को कलम से ही व्यवस्था परिवर्तन की अलख जगाने को प्रेरित कर किया है, जिससे देश की बीमारियाँ और परेशानियाँ दूर हो सकें।

अज्ञेय ने लीक से हटकर राह के अन्वेषण का जो मंत्र मश्जो को प्रदान किया उसके प्रति ये ईमानदारी से कर्तव्यनिष्ठ दिखाई पड़ते हैं। भाषायी प्रयोग में हिन्दी के साथ अंग्रेजी, पंजाबी, गुजराती, मराठी, कुमाऊँनी, हरियाणवी आदि शब्दों का शुद्वतम स्तर पर प्रयोग मिलता है। कबीर की भाँति स्थानीय बोली व भाषा का खिलंदड़पन इनकी रचनाओं की विशेषता है। हिन्दी साहित्य लेखन की जर्जर होती परम्परा की रीढ़ को सीधा करने में इनका अविस्मरणीय योगदान है।

जीवन और यथार्थ के द्वन्द्वात्मक पहलू को समझकर और उसे उसकी सही ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखकर ही मनुष्य अपने मुख्य ध्येय तक पहुँच सकता है। लेखक ने कहानियों के माध्यम से जीवन को नई दिशा देने की कोशिश की है। ज़िन्दगी के चौराहे पर, सिल्वर वैडिंग उसका बिस्तर मंदिर घाट की पौड़ियाँ, कैसे हो माट्साब आप? आदि रचनाएं समाज की विसंगतियों से उपजी हैं।

शोर मचाने और नीचा दिखाने में सहायक हो सकने वाली बातें ही आज राजनीति पर हावी होती जा रही हैं– "फाइल इस मेज से उस मेज पर और उस मेज से वापस इस मेज पर पहुँचाने वाले किरानी करतब ही मानो आज का नेतृत्व है।''8 भीड़ में खोया समाज में मश्जो ने यही कहकर नौकरशाही को बेनकाब किया है। भीड़ में खोए समाज में आज जबरदस्त वैचारिक क्रांति की आवश्यकता लेखक ने महसूस की इसलिए व्यंग्य के माध्यम से हर क्षोभ पर अपनी लेखनी चलाई है। आज इसे बेमानी माना जाने लगा है जबकि यही बिगड़ती सामाजिक स्थिति के कारगर हथियार हैं। रचनात्मक परिवर्तन के लिए कर्मठ व नैतिक साहसी व्यक्तित्व की नितान्त आवश्यकता है तभी भारत को अनेक कुचक्रों से बचाया जा सकेगा। भ्रष्टाचार, जातिवाद, क्षेत्रवाद, साम्प्रदायिकता और भाषावाद से पिटते भारत देश को मश्जो ने निशाना बनाते '21वीं सदी' में अनके विचार दिये हैं। "कमीनी से कमीनी स्थितियों पर उनका व्यंग्य क्या है ? सड़े हुए फोड़े से मवाद निकल जाने की राहत।''9

खण्डन–मण्डन कर्ता एवं प्रयोगधर्मी लेखक मश्जो ने समय, समाज, मीडिया, संस्कृति, राजनीति, धर्म और भूमण्डलीकरण के समस्त दबाव व तनावों को अपनी चिर–परिचित व्यंग्य वक्रोक्ति से परोसा है। रियलटी सोज, माइकल जेक्सन जैसी आधुनिक जीवन शैली को धता बताया है। आज संस्कार हमारी दादी, नानी, बुआ, मामा, चाचा नहीं टेलीविजन व फिल्मी दुनिया दे रही है। आज ऐसी न्यूक्लियर परिवार की अवधारणा बन गयी है कि बूढ़े माता–पिता अब मेहमान लगते हैं और उसी तरह वे स्वीकार किये जाते हैं। दाम और देह व्यापार ही सर्व सुख है।

कथा साहित्य के पुराने साँचे के भंजक मश्जो ने भारतीय साहित्यकारों व पुरुषों को यथार्थ का चिमटा हाथ में पकड़कर स्त्री–पुरुष सम्बन्धों को कुण्ठाजन्य न मानने एवं सात्विक सच स्वीकार करने की अपील की है। इसी को विचार कर मश्जो ने स्वयं लिखा है– जब मेरे हमजाद को लेकर हल्ला मचा कि वह अश्लील है। तब मेरे एक शुभचिंतक साहित्यकार ने मुझसे एक प्रति ली और पढ़कर बताया कि यह अश्लील नहीं है लेकिन यह हिन्दी में नहीं लिखा जाना चाहिए था। बंग्ला में लिखते, मराठी में लिखते, मलयालम में लिखते या अंग्रेजी में लिखते तो ठीक था। यह हिन्दी समाज के स्वभाव के अनुरुप नही है।''10 इसका अर्थ तो यह हुआ कि हिन्दी भाषी पाठक का नजरिया अन्य भाषाभाषी पाठकों से भिन्न है।

शिल्पकला खण्डहर और अनेक पुरातत्व के साक्ष्य इसके उदाहरण हैं कि मश्जो ने सर्वप्रथम खजुराहो और अजन्ता–एलोरा की शिल्प कला व सौन्दर्य साहित्य में स्थान प्रदान किया। परम्परा में जैनेन्द्र कुमार, अज्ञेय, उषा प्रियंवदा, कृष्ण बलदेव वैद्य एवं मैत्रेयी पुष्पा आदि इस शैली के साधक हैं। आज मनोहर श्याम जोशी का साहित्य समय के जंगल में छायादार वृक्षों की शीलता प्रदान करने के साथ नया रास्ता दिखाने में सक्षम है। सच ही है जो लोग घर छोड़ने से डरते हैं किस तरह के जीवन में प्रवेश कर सकते हैं, नहीं कहा जा सकता। कुल मिलाकर यह कि मुठभेड़ ही हर रचना, हर अन्वेषण और हर लहराते जीवन का मूल है। इसी के चलते मश्जो ने हर तरह की परती जमीन को तोड़कर नई–नई फसल उगाते 'हम लोग' को 'बुनियाद' दे सके हैं। निश्चित रुप से कहा जा सकता है कि मध्यकालीन परिवेश में कबीर ने भाषा व विचार से जो चेतना दी थी उसी भाँति मश्जो ने भी हिन्दी साहित्य में उत्तर आधुनिकता के यथार्थ को उकेरकर कबीर परम्परा को नये आयाम से सुसज्जित किया है। उन्हें उत्तर आधुनिकता के कबीर कहना अत्युक्ति न होगी।

सन्दर्भ

1. कृष्ण दत्त पालीवाल, सृजन का अन्तर्पाठ, पृष्ठ–380
2. दुष्यंत कुमार त्यागी, साये में धूप, पृष्ठ–17
3. अजय तिवारी, नया ज्ञानोदय दिसम्बर–2011, पृष्ठ–123
4. भगवती शरण मिश्र, हिन्दी के चर्चित उपन्यास, पृष्ठ–382
5. गोपाल राय, हिन्दी उपन्यास का इतिहास पृष्ठ–366
6. मश्जो, नेताजी कहिन, पृष्ठ–22
7. अजय तिवारी, नया ज्ञानोदय–2011, पृष्ठ–124
8. मनोहर जोशी, भीड़ में खोया समाज, पृष्ठ–4
9. कृष्ण दत्त पालीवाल, सृजन का अन्तर्पाठ, पृष्ठ–361
10. मनोहर श्याम जोशी, आवरण लेख, आउट लुक साप्ताहिक, सितम्बर–2003, पृष्ठ–25